बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 198

समुचित कदम

भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) की मौद्रिक नीति समिति (एमपीसी) ने शुक्रवार को नीतिगत रीपो दर में 25 आधार अंक की कमी कर दी। यह काफी हद तक अनुमानों के अनुरूप ही था। हालांकि कुछ प्रतिभागियों को ज्यादा बड़ी कटौती की उम्मीद थी। एमपीसी ने बड़ी कटौती न करके आर्थिक मंदी के दौर में सही कदम उठाया है। केंद्रीय बैंक ने चालू वित्त वर्ष में सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की वृद्धि दर के अनुमान को भी 6.9 फीसदी से कम करके 6.1 फीसदी कर दिया।

यह कहा जा सकता है कि वृद्धि के अनुमानों में कमी के चलते दरों में बड़ी कटौती की आवश्यकता थी, खासतौर पर इसलिए क्योंकि मुद्रास्फीति के 4 फीसदी के दायरे के भीतर रहने का अनुमान है। अपनी पिछली बैठक में जीडीपी वृद्धि अनुमान में कमी न होने पर भी समिति ने नीतिगत दर 35 आधार अंक कम की थी। बहरहाल, 25 आधार अंक की कटौती की उचित वजह थी। गत सप्ताह के नीतिगत कदम के पहले एमपीसी ने चालू चक्र में नीतिगत दर में 110 आधार अंक की कमी की है। यह पूरी तरह पारेषित नहीं हुआ। फरवरी-अगस्त के बीच वाणिज्यिक बैंकों के नए ऋण की औसत ऋण दर में केवल 29 आधार अंक की कमी आई जबकि मौजूदा ऋण की दर में सात आधार अंक का इजाफा हुआ। चूंकि पारेषण अत्यंत कम है इसलिए कुछ नीतिगत गुंजाइश बनाकर व्यवस्था को समायोजन की मोहलत देना उचित है। ऋण दर को बाहरी मानकों से जोड़ने से पारेषण में सुधार होना चाहिए। हालांकि इससे बैंकिंग तंत्र के सामने अलग तरह की चुनौती आ सकती है। इसके अलावा वैश्विक स्तर पर बढ़ती अनिश्चितता के बीच कुछ नीतिगत गुंजाइश बचाकर रखना समझदारी होगी। शुक्रवार को ही जारी मौद्रिक नीति रिपोर्ट दर्शाती है कि वैश्विक वृद्धि दर में 50 आधार अंक की कमी हमारे देश की वृद्धि दर में 20 आधार अंक तक की कमी ला सकती है। हालांकि आरबीआई गवर्नर शक्तिकांत दास ने कहा है कि केंद्रीय बैंक के पास ऐसी कोई वजह नहीं है कि वह राजकोषीय घाटे को तय सीमा में रखने के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता पर शुबहा करे। परंतु यह संभव है कि एमपीसी के सदस्यों ने राजकोषीय विचलन की संभावना पर विचार किया हो। एमपीसी के सदस्यों ने अतीत में भी राजकोषीय प्रबंधन को लेकर चिंता प्रकट की है। उदाहरण के लिए अगस्त की बैठक में चेतन घाटे ने कहा था, 'मुझे लगातार चिंता हो रही है कि हमारे सरकारी क्षेत्र की भारी-भरकम उधारी आवश्यकता (जीडीपी के 8-9 फीसदी के बराबर) राजकोषीय असंतुलन अर्थव्यवस्था को गहरे तक प्रभावित करेगी।' उन्होंने कहा कि राजकोषीय फिसलन के पथ को सीमा के रूप में देखा जाना चाहिए लेकिन सीमा का अभिसरण भी होता है और एक तरह का 'रचनात्मक लेखा' देखने को मिलता है। जाहिर है राजकोषीय फिसलन मुद्रास्फीति के पूर्वानुमान और मौद्रिक नीति के चयन को प्रभावित कर सकती है। हालांकि दरों संबंधी निर्णय के बाद शेयर कीमतों और बॉन्ड कीमतों में गिरावट आई। इसके लिए आंशिक रूप से धीमी वृद्धि के पूर्वानुमान से जुड़ी चिंता और ज्यादा कटौती की उम्मीद जिम्मेदार थी। हालांकि एमपीसी ने कहा है कि वह वृद्धि को गति देने की आवश्यकता होने पर अपने रुख में समायोजन जारी रखेगी। परंतु बाजार अब जानना चाहेंगे कि नीतिगत दरों में कितनी कमी की जा सकती है। स्पष्ट है कि समायोजन वाले रुख का यह मतलब नहीं है कि एमपीसी हर दो महीने में दरों में कटौती करेगी ही। यह स्पष्ट नहीं है कि केंद्रीय बैंक वृद्धि को सहायता देने के लिए वास्तविक दरों में कितनी कमी करने को तैयार होगा। समिति को इस विषय को स्पष्ट करना होगा। ज्यादा स्पष्ट होने से पारेषण में सुधार होगा और लंबी अवधि की मुद्रास्फीति के अनुमान भी संभलेंगे। आधुनिक केंद्रीय बैंकों के पास संचार के रूप में एक अहम उपाय है जिसका प्रभावी इस्तेमाल होना चाहिए।

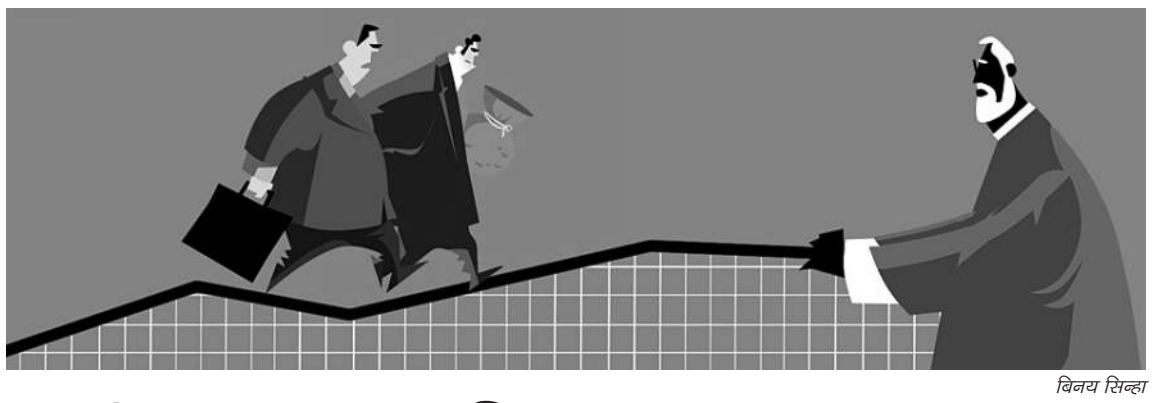

बिनय सिन्हा

बड़े वास्तविक सुधार से ही होगा बेड़ा पार

मौजूदा आर्थिक संकट को समाप्त करने के लिए वास्तविक और साहसिक सुधार की जरूरत है।

राष्ट्र की बात

शेखर गुप्ता

देश के कारोबारी जगत में उद्यमिता की भावना जगाने की बात जब तब होती रहती है। देश के राजनेता भी अक्सर इस जुमले का प्रयोग करने लगे हैं। याद करें तो सबसे पहले मनमोहन सिंह और उसके बाद जसवंत सिंह (अटल बिहारी वाजपेयी के वित्त मंत्री) ही दो ऐसे नेताओं के रूप में याद आते हैं जिन्होंने कारोबारी जगत से अपने भीतर यह भावना जगाने की अपील की थी। मोदी सरकार ने भी बीते दिनों अपने तरीके से ऐसा करने का प्रयास किया।

इस स्वतंत्रता दिवस को अपने भाषण में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने देश के कुछ परिसंपत्ति निर्माताओं से संवाद कायम करने की कोशिश की। उन्होंने कहा कि सरकार उनकी इज्जत करती है और यह मानती है कि उन्होंने राष्ट्र निर्माण में अहम योगदान दिया है।

लाल किले के प्राचीर से देश के किसी भी प्रधानमंत्री द्वारा निजी उद्यमिता को बढ़ावा देने वाला यह सबसे मजबूत वक्तव्य था। इसके बाद इस क्रम में कई अन्य कदम उठाए गए: कॉर्पोरेट कर दर में भारी कमी, पूंजीगत लाभ कर में बदलाव और कंपनियों द्वारा कारोबारी सामाजिक उत्तरदायित्व (लाभ का दो फीसदी सामाजिक कार्यों में व्यय करना) के उन मामलों को आपराधिक बताने का निर्णय बदल दिया गया जहां कोई निरीक्षक अनुपालन न होने को अपराध ठहरा सकता था। इसी तरह विदेशी पोर्टफोलियो निवेशकों (एफपीआई) के पूंजीगत लाभ पर लगने वाला भारी-भरकम कर भी हटा लिया गया है। जोखिम लेने वाली सरकार जिसने एक बार निर्णय लेने के बाद कभी उसे नहीं बदला उसका अपने कदमों को वापस लेना एक नया अनुभव था।

सरकार में शामिल कोई व्यक्ति इसे स्वीकार नहीं करेगा लेकिन पहली बार उसे यह महसूस हुआ कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की असाधारण निजी लोकप्रियता और दूसरी बार प्रचंड बहुमत के साथ शासन कर रही सरकार से बढ़कर भी कोई चीज है: वह है बाजार। न्यायपालिका, मीडिया, निर्वाचन आयोग और यहां तक कि पाकिस्तान से भी यह सरकार निपट सकती है लेकिन बाजार की राजनीतिक शक्ति से काबू नहीं किया जा सकता।

बीते कई सप्ताहों से वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण लगातार कारोबारी समुदाय तक पहुंच बना रही हैं। उन्होंने एक के बाद एक संवाददाता सम्मेलनों के माध्यम से बजट की कई दिक्कतदेह व्यवस्थाओं में सुधार किया। वित्त सचिव, जो शायद बुरी खबरों से भरा बजट बनाने वालों में अहम थे, उन्हें पद से हटा दिया गया और उन्होंने समय से पहले सेवानिवृत्ति का आवेदन किया है। बजट के बाद से आरबीआई ने दरों में दो बार कटौती की और उसकी भाषा को भी आर्थिक अखबारों ने शांतिवादी करार दिया है।

इसके बावजूद कारोबारी मिजाज में खास सुधार नहीं आया। यहां तक कि विश्व आर्थिक मंच के इंडिया इकनॉमिक समिट में भी कारोबारियों में कोई उत्साह देखने को नहीं मिला। कारोबारी जगत एक ऐसी सेना की तरह नजर आ रहा है जिसका मनोबल टूट चुका है। आप उसे बढ़िया से बढ़िया हथियार दे सकते हैं लेकिन अगर सैन्य अधिकारी अपने मन में हार मान चुके हैं तो वे अपने जवानों को जंग में प्रेरित नहीं कर सकते। युद्ध जीतना तो दूर की बात है।

नैतिक बल, बल्कि स्वाभिमान की कमी के चलते सरकार लगभग हर शुक्रवार एक के बाद एक अच्छी खबरों की झड़ी लगा रही है लेकिन उनका भी कोई फायदा नहीं नजर आ रहा। कॉर्पोरेट कर में छूट से कारोबारी जगत को 1.45 लाख करोड़ रुपये की सीधी राहत मिली। बाजार में कुछ दिन तेजी देखने को मिली लेकिन उसके बाद वही ढाक के तीन पात।

कर रियायत के बाद 24 सितंबर को शेयर बाजार उच्चतम स्तर पर पहुंचा था। तब से अब तक बीएसई सेंसेक्स को 2.53 लाख करोड़ रुपये का नुकसान हो चुका है। ब्याज दर में कटौती समेत अन्य पलटे गए फैसले तथा सुधार भी उसी निराशा की स्थिति की भेंट चढ़ गए। दुनिया भर के बाजारों की हालत खराब है लेकिन हमें यह मानना होगा कि तमाम दिशाहीनता, अपरिपक्वता और विषमता के बावजूद वे सत्ता से सच कहना नहीं भूलते। भारत के बाजार निर्भीक होकर वह कर रहे हैं जो मीडिया और न्यायपालिका जैसे बड़े संस्थान शायद करना नहीं चाहते। यानी मोदी सरकार को बुरी खबर सुनाना।

पिछली तिमाही में पांच फीसदी की वृद्धि दर झटका देने वाली थी लेकिन केवल उन्हें जो मासूम थे। अर्थव्यवस्था पर नजर रखने वालों को इस बारे में अंदाजा था। अगर कोई बड़ा कदम नहीं उठाया गया तो हालात सुधरने की स्थिति नहीं नजर आती। वह कदम क्या होगा इसका किसी को कोई अंदाजा नहीं है। क्योंकि अगर अंदाजा होता तो रिजर्व बैंक को वृद्धि दर के पूर्वानुमान को 6.9 फीसदी से घटाकर 6.1 फीसदी नहीं करना पड़ता।

उद्यमिता की भावना को वर्तमान मुनाफा या कर कटौती से उतना प्रोत्साहन नहीं मिलता जितना भविष्य के आशावाद से। उसमें गिरावट आ रही है, खासतौर पर मोदी सरकार के पहले कार्यकाल में नोटबंदी से आर्थिक गति भंग होने के बाद। कारोबार आम लोगों और परिवार से अलग नहीं होते। जब उनको भविष्य अंधकारमय दिखता है तो वे भी नई आय, बचत और हालिया कर छूट जैसे कदमों से मिली राहत को दबा लेते हैं ताकि वह बुरे वक्त में काम आए। वे कारोबार में निवेश करने और जोखिम उठाने का काम तभी करते हैं जब उनमें उत्साह होता है।

सीएमआईई का कंपनियों के पूंजीगत व्यय का डेटा पूरा किस्सा बताएगा। दिसंबर 2018 में समाप्त तिमाही में यह 3.03 लाख करोड़ रुपये था जो इस वर्ष मार्च तिमाही तक यह 2.66 लाख करोड़ रुपये रह गया। आगे की दो तिमाहियों में तो यह 84,000 करोड़ रुपये और 99,000 करोड़ रुपये रह गया। एक बार फिर सीएमआईई के आंकड़े बताते हैं कि गत तिमाही में तमाम कंपनियों की बिक्री वृद्धि में एक फीसदी की गिरावट आई। इससे पहले ऐसा 2008 की सबसे बुरी तिमाही में हुआ था जब लीमन ब्रदर्स का संकट उत्पन्न हुआ था। इन आंकड़ों को किसी भी तरह देखें निष्कर्ष यही निकलेगा। तमाम आर्थिक संकेतक नकारात्मक हैं और ऐसा काफी समय से है। कुछ के लिए वैश्विक माहौल को उत्तरदायी माना जा सकता है लेकिन वह बहुत छोटा हिस्सा है। समस्या की जड़ें यहीं हैं। जब मुकेश अंबानी जैसे कारोबारी समेत तमाम बड़े कारोबारी नकदी संभाले हुए हैं या अपना जोखिम कम कर रहे हैं, अपने कर्ज चुकता कर रहे हैं और इंतजार कर रहे हैं तो यह आशा करना सही नहीं है कि बाकी लोग निवेश करेंगे। अगर आप देश के बेहतरीन से बेहतरीन कारोबारी नेताओं से पूछेंगे तो वे कानाफूसियों में ही सही आपको बताएंगे कि सन 1991 के बाद इतनी निराशा कभी नहीं थी न ही आत्म-सम्मान इस कदर कम था। इसके लिए केवल कर अधिकारियों को छापेमारी और गिरफ्तारी करने समेत सौंपे गए बेहिसाब अधिकार ही जवाबदेह नहीं हैं बल्कि फंसे हुए कर्ज से निपटना भी इसकी वजह है। अगर सामान्य उधार लेने वाले से लेकर गंभीर उद्यमी तक सभी वास्तव में खराब कारोबारी चक्र के शिकार हैं और ऋण चोरी न करने वालों को भी उतने ही संदेह से देखा जा रहा है तो उद्यमियों को ऋण लेने और बैंकरों को ऋण देने का प्रोत्साहन कहां से मिलेगा।

एक प्रमुख और जानेमाने कारोबारी ने मुझसे कहा कि जोखिम तो हर कारोबार में होता है लेकिन अगर उधारी चुकाने में 30 दिन की देरी होने पर बैंक मेरा नाम डिफॉल्ट करने वाले के रूप में प्रकाशित कर देगा और मुझे दिवालिया प्रक्रिया के लिए राष्ट्रीय कंपनी लॉ पंचाट के पास भेज देगा तो मैं ऐसा जोखिम क्यों लूंगा? उन्होंने सवाल पूछा कि किसी के बीमार होने पर उसे अस्पताल भेजते हैं या श्मशान घाट? उनके मुताबिक आरबीआई के ताजा नियम के अधीन दिवालिया प्रक्रिया देश की उद्यमिता के अंतिम संस्कार के समान है और इस लोकलुभावन और बदले की भावना से काम कर रहे सत्ता तंत्र ने एनसीएलटी के रूप में कारोबारी जगत के लिए श्मशान घाट बनाया है।

अर्थव्यवस्था का संकट अब कर कटौती, प्रोत्साहन और वादों से आगे निकल चुका है। इनमें से कुछ तरीके काम आ सकते हैं लेकिन वैसे ही जैसे मरणासन्न मरीज पर स्टेरॉयड। अर्थव्यवस्था को अब वास्तविक और साहसिक सुधारों की जरूरत है। इसकी शुरुआत सरकारी कंपनियों के वास्तविक निजीकरण से हो सकती है। यदि मोदी सरकार कार्यकाल के छठे वर्ष भी ऐसा नहीं कर सकती है तो उसके करिश्मे पर कौन यकीन करेगा। माना जाएगा कि सुधार की बातें चुनाव जीतने का जुमला हैं, न कि जरूरी लक्ष्य।

देश की परियोजनाओं में निवेश का बन रहा उचित परिवेश

नीति नियम

मिहिर शर्मा

सरकार एक राष्ट्रीय इन्फ्रास्ट्रक्चर पाइपलाइन तैयार करेगी जिसमें 100 करोड़ रुपये से अधिक लागत वाली नई तथा पुनर्निर्माण परियोजनाओं को शामिल किया जाएगा। इसके तहत निवेशकों को जानकारी दी जाएगी कि इनमें से कौन सी परियोजना क्रियान्वयन के किस स्तर पर है। इससे निवेशकों को यह तय करने में आसानी होती है कि उक्त परियोजना में निवेश करें या नहीं।

सैद्धांतिक तौर पर इसका स्वागत होना चाहिए। इससे पता चलता है कि सरकार बुनियादी ढांचा क्षेत्र में प्रधानमंत्री के 100 लाख करोड़ रुपये के निवेश के लक्ष्य को लेकर गंभीर है। इसे समझने के लिए इस संदर्भ को देखना जरूरी है। विदेशी निवेशकों, खासतौर पर बीमा और पेंशन फंड जैसी स्थिर पूंजी रखने वाले निवेशकों के साथ बातचीत में प्रोजेक्ट पाइपलाइन का जिक्र बार-बार आने की एक वजह है। भारत को अभी भी निवेश के मामले में जोखिम भरा माना जाता है। निवेशकों को न केवल प्रतिफल कम मिलने की आशंका रहती है या वे मुद्रा अवमूल्यन से होने वाले नुकसान से चिंतित रहते हैं बल्कि उनको विफल परियोजनाओं में निवेश से सारी पूंजी गंवाने का खतरा भी रहता है। नियामकीय या वैधानिक बाधाएं तो हैं ही। कई बार भारतीय साझेदार अपेक्षा पर खरे नहीं उतरते। भारत की विवाद निस्तारण प्रणाली और प्रशासनिक तथा नियामकीय ढांचा ऐसी आशंकाओं की अहम वजह हैं।

यही कारण है कि वैश्विक निजी निवेशक किसी परियोजना में निवेश करने के पहले साझेदार या गारंटर के रूप में भारत सरकार का साथ चाहेंगे। कई लोग यह अनुमान लगाते हैं कि पूंजी को बड़ा नुकसान रोकने के लिए राज्य को जोखिम में साझेदार बनाना सही है। यह अपने आप में गलत अवधारणा नहीं है। दिक्कत यह है कि इससे सरकारी खजाने पर बोझ पड़ता है।

जरूरत ऐसे तरीके निकालने की है जिनके जरिये सरकार साझेदार बने और देश के बारे में राजनीतिक और नीतिगत अनिश्चितता को समाप्त करने का काम करे। उसे बिना खजाने पर बोझ डाले जोखिम में शामिल होना होगा। सरकारी निगरानी वाली प्रोजेक्ट पाइपलाइन यह काम प्रभावी तरीके से कर सकती है क्योंकि सरकार परियोजना स्तर पर रेटिंग एजेंसी के रूप में पेश आती है। ऐसे में दी गई वित्तीय सहायता के लिए समुचित जोखिम-प्रतिफल स्तर का आकलन किया जा सकता है।

ऐसी पाइपलाइन अपने आप जोखिम कम नहीं करती है। बल्कि यह जोखिम को स्पष्ट रूप से सामने रखती है। इससे अनिश्चितता कम होती है। अगर सही तरीके से डिजाइन किया जाए तो यह उपलब्ध सूचना के आधार पर बाजार विकास में भी मददगार साबित हो सकती है।

ऐसा आवश्यक नहीं कि नई सूचना का पता सरकार ने पाइपलाइन निर्माण के दौरान ही लगाया हो। यह कल्पना नहीं करनी चाहिए कि ढेर सारे सरकारी अंकेक्षक ऐसी सूची में शामिल होने वाली परियोजनाओं की जांच में लग जाएंगे। ऐसी किसी भी कोशिश को मध्यम अवधि में बाधाओं का सामना करना पड़ेगा क्योंकि राज्य के पास क्षमता और निगरानी के लिए संसाधन सीमित हैं। इसके बजाय जरूरत इस बात की है कि परियोजना के बारे में ऐसी सूचना पर साझेदारी हो जो पहले से सार्वजनिक हो। इस जानकारी को संभावित निवेशक से साझा किया जाना चाहिए।

यह सवाल उठ सकता है कि क्या ऐसे में अनुमान बेमेल भी हो सकते हैं। कई निवेशक परियोजना पाइपलाइन को देखकर यह मान सकते हैं कि सरकार अप्रत्यक्ष रूप से इन परियोजनाओं की गारंटी दे रही है। सरकार ऐसा कोई दावा शायद ही करे। सच तो यह है कि सरकार अल्पावधि में गारंटी देने की स्थिति में ही नहीं है। अगर अग्रिम अनुमान सही नहीं हुए तो भविष्य में दिक्कत हो सकती है।

सरकार द्वारा निजी क्षेत्र को लाभ पहुंचाने वाले किसी भी अन्य कदम की तरह इस मामले में भी जोखिम को स्पष्ट कर चुनिंदा निजी परियोजनाओं में निजी निवेशकों को आकृष्ट करने का मामला भी हमेशा सांठगांठ और भ्रष्टाचार की आशंका से घिरा रहेगा। सरकार को पाइपलाइन इस प्रकार तैयार करनी होगी कि वह वास्तविक या स्पष्ट अनियमितताओं से बचे।

वैसे इस विचार में काफी संभावनाएं हैं। एक अन्य पहलू है जो इसमें और सुधार लाएगा: ऐसी किसी भी परियोजना का भारत को जलवायु की दृष्टि से अधिक संवेदनशील बनाने की दिशा में क्या असर होगा, इसका आकलन किया जा सकता है। जो बुनियादी परियोजनाएं ग्रामीण इलाकों को सक्षम बनाती हैं या उत्सर्जन लक्ष्य हासिल करने अथवा ग्राह्यता के मामले में उपयोगी होती हैं, उन्हें बढ़ावा दिया जाना चाहिए। निवेश का अंतिम निर्णय तो जोखिम और प्रतिफल के आधार पर ही होगा लेकिन जलवायु परिवर्तन के कारण मानक परिसंपत्ति से जुड़ा जोखिम अहम हो सकता है, वहीं वातावरण में बढ़ती गर्मी के बारे में भी पूरी जानकारी रहनी आवश्यक है।

अंत में, हमारे पास कभी इतना बढ़िया विचार नहीं रहा जिसे देश की अफसरशाही नष्ट न कर सके। चीजों को इस प्रकार नष्ट करने की सबसे अहम वजह है निजी क्षेत्र के लिए और उसके साथ काम न करने की मंशा। पाइपलाइन तैयार करने और उसका नियमन करने वालों को साफ बता दिया जाना चाहिए कि यह उपाय सरकार, परियोजना क्रियान्वयन या मतदाताओं के नहीं बल्कि निवेशकों के काम का है। एक मान्य धारणा यह है कि भारत विदेशी निवेशकों को आकर्षित करने में सक्षम नहीं है। देश अपने परंपरागत दंभ के साथ निवेशकों से संपर्क नहीं कर सकता। उसे निवेशकों के बारे में यह भी नहीं सोचना चाहिए कि वे मामूली लाभ या रियायतों के चक्कर में होंगे। जरूरत यह है कि उनकी जरूरतों को सुना जाए और उन्हें पूरी जानकारी दी जाए। भारत में ऐसी विनम्रता देखने को नहीं मिली। पाइपलाइन परियोजना अपने आप में एक विज्ञापन है। यह एक भरोसेमंद योजना है जो सरकार और पूंजी के बीच विश्वास का रिश्ता कायम करती है। इस अवसर को गंवाना नहीं चाहिए।

कानाफूसी

दिल्ली चुनाव की तैयारी

केंद्रीय मंत्री प्रकाश जावडेकर, हरदीप सिंह पुरी और नित्यानंद राय इस सप्ताह से दिल्ली की सभी 70 विधानसभाओं की यात्राएं शुरू करेंगे। भारतीय जनता पार्टी ने अगले वर्ष की शुरुआत में होने जा रहे दिल्ली राज्य विधानसभा चुनाव के लिए वरिष्ठ पार्टी नेता जावडेकर को प्रभारी बनाया है। दिल्ली के स्थानीय निवासी पुरी और पूर्वांचल के राय को दिल्ली में पार्टी की मजबूती और चुनाव के लिए सुचारु अभियान चलाने के लिए लाया गया है। इस चुनाव से भाजपा को काफी उम्मीदें हैं और वह चाहती है कि चुनाव जल्द से जल्द संपन्न हों। पिछले चुनावों में पार्टी केवल तीन सीटें ही जीत पाई थी जबकि अरविंद केजरीवाल की आम आदमी पार्टी ने रिकॉर्ड 67 सीटें जीती थीं। भाजपा इस बार दिल्ली की गद्दी हासिल करने में कोई कसर नहीं छोड़ना चाहती है।

खाली सिंहासन

राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी के नेता अजित पवार के बारे में कहा जा रहा है कि उन्होंने राजनीति से संन्यास ले लिया है। कम से कम उनके कुछ सहयोगियों का तो यही कहना है। परंतु पिछले दिनों एक दिलचस्प घटना देखने को मिली। पुणे में पार्टी कार्यकर्ताओं को संबोधित करने के एक कार्यक्रम में एक विशेष सिंहासननुमा कुर्सी बनाई गई थी। यह कुर्सी मंच पर अकेले उनके लिए लगाई गई थी। हालांकि पवार ने उस पर बैठने से इनकार कर दिया और वह स्टील की सामान्य कुर्सी पर बैठे। सिंहासन पूरी बैठक के दौरान खाली रहा।

आपका पक्ष

विकास बनाम पर्यावरण

बंबई उच्च न्यायालय द्वारा मेट्रो कार शेड के लिए 2,700 पेड़ काटने की अनुमति दिए जाने के बाद लोग सड़कों पर उतर आए हैं और इस फैसले के खिलाफ प्रदर्शन कर रहे हैं। इस मुद्दे ने एक नई बहस को जन्म दे दिया है कि आखिर विकास और पर्यावरण में किसे चुनें? सवाल गंभीर है क्योंकि सतत विकास तो आज के समय में महज कागजों पर रह गया है। शहरीकरण और बदलते दौर में मेट्रो को भी नकारा नहीं जा सकता लेकिन बीच के रास्ते की तलाश क्यों नहीं हो रही है। एक तरफ जब जलवायु परिवर्तन को लेकर जनता और सरकारें आमने-सामने हैं तब यह मुद्दा और भी लोगों का ध्यान खींचता है। लेकिन महज चंद लोग सोशल मीडिया पर अपनी प्रतिक्रिया दर्ज करा अपनी जिम्मेदारी पूरी मान लेते हैं। हम भूल जाते हैं कि हम अपनी और आने वाली पीढ़ियों के लिए खुद गड्ढे खोद रहे हैं। हमें जीवित रहने के लिए पर्यावरण के मुद्दे पर बहस करना ही होगा। अब इस पूरे घटनाक्रम में एक बात सबसे जरूरी और दिलचस्प यह है कि आज भी विकास की दौड़ में कुछ लोग ऐसे हैं जो पेड़ों की कटाई के खिलाफ प्रदर्शन कर जेल जाने को भी तैयार हैं। यह घटना उम्मीद देता है कि हम इस दुनिया को बचाने की जद्दोजहद करें तो उसे बचा सकते हैं। एक समाज के तौर पर हमें जागरूक होना पड़ेगा। कम से कम जिम्मेदार संस्थाएं वैकल्पिक विषय सोचें और अगर एक पेड़ काटें तो दो लगाएं भी।

मुंबई में मेट्रो कार शेड की जगह में पेड़ काटने का विरोध किया जा रहा है *-पीटीआई*

संजय दूबे, नई दिल्ली

बाढ़ की समस्या का हो स्थायी हल

जल प्रबंधन तथा आपदा प्रबंधन के साथ-साथ कुछ महत्त्वपूर्ण उपायों से इससे बचा जा सकता है। बहुचर्चित नदी जोड़ो परियोजना से बाढ़ तथा सूखने वाली नदियों को आपस में जोड़कर अतिरिक्त जल का प्रबंधन किया जा सकता है। छोटे व बड़े स्तर पर वाटर हार्वेस्टिंग तकनीक के व्यापक और अनिवार्य क्रियान्वयन से अतिरिक्त जल को सीधे भूमि में स्थानांतरित किया जा सकता है जिससे बाढ़ से राहत तो मिलेगी ही भूमिगत जल का स्तर भी बढ़ेगा। बाढ़ को सहने योग्य अधोसंरचना का अधिकतम निर्माण जिससे बाढ़ के समय जानमाल का नुकसान कम होगा। जंगलों का संरक्षण आज के समय में अत्यंत आवश्यक और अनिवार्य जरूरत है। जंगल बाढ़ के प्रभाव को कम करते हैं। आधुनिक और नवीनतम तकनीकों का प्रयोग जैसे इसरो व भारतीय मौसम केंद्र की सहायता से बाढ़ का समय पूर्व आकलन, बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं के प्रयोग से राहत कार्य का पैसा जरूरतमंद को तुरंत पहुंचाना आदि उपाय किए जा सकते हैं। बाढ़ हमेशा से प्राकृतिक आपदा के रूप में गिने जाते रहें हैं। मगर जंगलों का विनाश प्राकृतिक नहीं है। कंक्रीट के जंगल प्राकृतिक नहीं है। नदियों पर बांध प्राकृतिक नहीं है और न ही वैश्विक तापमान का बढ़ना प्राकृतिक है। विकास की दौड़ में जंगलों का विनाश हुआ है। आधुनिक नगर बसे हैं, उद्योगों का विकास हुआ है, वैश्विक तापमान बढ़ा है और जलवायु में परिवर्तन हुआ है। इन कारणों से बाढ़ जैसी आपदाओं की बारंबारता बढ़ी है। बाढ़ पहले भी आती थी मगर अब इनकी आवृत्ति से ऐसा लगता है मानव ही इसे बुलाता है। बाढ़ का मुख्य कारण प्राकृतिक कम मानव जनित ज्यादा प्रतीत होता है।

जितेंद्र साहू, शहडोल

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।